

धुएं में मछली सुखाने की पारम्परिक पद्धतियाँ

जे.के. बन्द्योपाध्याय एवं एम. एम. प्रसाद

प्रस्तावना:

धुएं में मछली को सुखाकर लम्बे समय तक खाने के लिए संरक्षित करना मत्स्य संसाधन की एक अति प्राचीन पद्धति है। अधिकतर सस्ती तथा छोटे आकार की मछलियों को ही इस पद्धति से संरक्षित किया जाता है। महंगी तथा अपेक्षाकृत उत्तम प्रजाति की मछलियों को तभी संरक्षित किया जाता है जब आपूर्ति मांग से अधिक होती है। परन्तु मछली की कुछ ऐसी प्रजातियाँ भी हैं जिनको कच्चे से अधिक संरक्षित रूप में खाया जाना पसंद किया जाता है। हालाँकि आज मत्स्य संसाधन की अनेक परिष्कृत तकनीकें उपलब्ध हैं। परन्तु मछली को धुएं में सुखाकर संरक्षित करना आज भी बड़े पैमाने पर देखा जा सकता है, क्योंकि यह पद्धति सरल और बेहद सस्ती है। भारत में समुद्री मछलियाँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। यही नहीं देश को करोड़ों की विदेशी मुद्रा का अर्जन भी होता है जिसकी वजह से समुद्री मछलियों के शुष्क तथा धूम्र शुष्क संरक्षण की अनेकों आधुनिक एवं उत्कृष्ट पद्धतियाँ हैं (देवदासन आदि, 1975)। परन्तु मीठे पानी की मछलियों के लिए ये पद्धतियाँ भी अनजानी हैं। जबकि मीठापानी मत्स्य संरक्षण में इन पद्धतियों के प्रवेश का विस्तृत क्षेत्र है। जलाशय से पकड़ी गयी कीमती मछलियों को ताज़ा रूप बेच दिया जाता है, और सस्ती एवं छोटी मछलियाँ जो कुल प्रग्रहण का लगभग 30-40% होती हैं, इनका कुछ भाग ताज़े रूप में बेच दिया जाता है वरना अधिकतर मछलियों को धूम्र-शुष्क-गति से संरक्षित करने का काफ़ी प्रचलन हीराकुड के आसपास लगभग सभी मछुवारे गांवों में है।

मत्स्य संसाधन:

हीराकुड जलाशय का क्षेत्रफल 74,592 हैक्टर है (सिंगरन 1983) और यह भारत का सबसे बड़ा जलाशय है। इस जलाशय के चारों ओर लगभग 3000 मछुवारों की

जीविका का स्रोत। जलाशय में भारतीय मेजर कार्प, कैट फिश और अन्य विविध प्रजातियों की मछलियाँ पायी जाती हैं। कार्प तथा कैट फिश, रो फिश में शीतलन करके मुख्यतः रेल गाडी द्वारा राऊरकेला, टाटानगर और हावड़ा बाज़ार में विक्रय हेतु भेज दी जाती हैं। छोटी एवं सस्ती मछलियों को धुएं में संरक्षित करके या तो मछुवारे स्वयं या बिचौलियों द्वारा स्थानीय दैनिक या साप्ताहिक बाज़ार में बेच दी जाती है।

मत्स्य संसाधन की पारम्परिक विधियाँ :

सुविधा और मांग के अनुसार मछुवारे मत्स्य संसाधन के तरीकों में फेर बदल करते रहते हैं। कोई विशेष पद्धति, मछली के आकार, गुणावत्ता तथा स्थानीय बाज़ार में मांग के आधार पर ही निश्चित की जाती है। बन्द्योपाध्याय एवं चट्टोपाध्याय (2001) के अनुसार स्थानीय मछुवारे मुख्यतः पुआलझारा, हांडीसुखा और चालीसुखा पारम्परिक पद्धतियों से मछलियों को धूम्रशुष्क करते हैं।

पुआलझारा विधि : पुआलझारा विधि से विशेषतया पुन्टियस मछली को धूम्र संसाधित करते हैं। इस विधि में धान का पुआल (स्ट्रो) और मछलियों की इकहरी तह लगा देते हैं और पुआल में आग लगा देते हैं। इस प्रकार धूम्र शुष्क उत्पाद में न केवल धुएं का सुवास आ जाता है परन्तु कभी-कभी मछलियाँ कच्ची रह जाती हैं या जल भी जाती हैं। इस विधि का प्रयोग ज्यादातर वर्षा ऋतु में अनुभव किया गया। इस समय क्षेत्रों में जमी पानी में कई तरह की मछलीयाँ पायी जाती हैं।

हांडीसुखा विधि : इस विधि में मिट्टी के जालीदार बर्तन में मछलियाँ भरकर भट्टी पर रखकर लकड़ी, धान का पुआल या सूखी पत्तियों से आग जलायी जाती है और मछलियों को लकड़ी की सहायता से उलट पलट की जाती



है, जिससे मछलियों में समान रूप से धूआ प्रवेश करे, हांडीसुखा विधि का अन्तिम उत्पाद पुआलझारा विधि से अच्छी गुणवत्ता वाला माना जाता है ।

चालीसुखा विधि: इस विधि में मछलियों को लोहे की जाली या बांश की खपंच पर फैलाकर भट्टी के ऊपर फिट किया हुआ इक मिट्टी की हांडी पर, जिसका निचला हिस्सा नहीं रहता है, रख दी जाती है । इन प्रसाधनों की एक से अधिक तह हो सकती हैं । भट्टी में धान के पुआल, सूखे पत्तियों या लकड़ी के बुरादे से धुंआ किया जाता है और बीच बीच में जालियों को एक दूसरे के स्थान पर विस्तारित कर दिया जाता है । इस पद्धति से गाड़सिया चापरा, रोहति कोसियो, पुन्टियस, झींगा आदि संसाधित किया जाता है । इस पारम्परिक पद्धति में धूम्र शुष्क करने का कोई निश्चित समय नहीं है । वह मछली के आकार, संभरण समय तथा जलवायु पर निर्भर करता है । इसलिए उत्पाद में नमी की मात्रा सुनिश्चित नहीं होती । यदि उत्पाद को लम्बी अवधि के लिए संभरण करना हो तो धूमित उत्पाद को धूप में सुखाया जाता है ।

फिलहाल हम ने अनुभव किया है कि साईकिल के बेकार चक्को की तालियां निकालकर इनके छेदों में लोहे के महीन तार में जाल बुन दिया जाता है, उस पर मछलियों को परत में बिछाकर धुंआ किया जाता है । यह एक रोचक तथ्य है कि 10 वर्ष पहले इस तरह मछलियों को धूमित नहीं किया जाता था । परन्तु के.म.प्रौ.सं. द्वारा निर्मित आधुनिक धूम्रकक्ष में मछुवारों ने अपने आवश्यकतानुसार बदलाव करके इसे धूम्रण हेतु रूपान्तरित तकनीक के रूप में अपना लिया है ।

साल, कटहल, बबूल आदि की लकड़ियाँ हीराकुड के आसपास जंगल से लाकर आग जलाने के काम में लायी जाती हैं ।

धूम्र संसाधन हेतु उत्कृष्ट धूम्र कक्ष:

केन्द्रीय मत्स्य प्रौद्योगिकी संस्थान ने अनुसंधानों के ज़रिए

क्षेत्रीय आवश्यकता के अनुसार मत्स्य संसाधनों की कई महत्वपूर्ण, उत्कृष्ट एवं आधुनिक विधियों का विकास किया है । बन्दोपाध्याय एवं चट्टोपाध्याय (2001) ने एक आधुनिक धूम्र कक्ष का विकास किया है । इस धूम्र कक्ष से संसाधित मछलियों की गुणवत्ता पारम्परिक विधियों की अपेक्षा बेहतर तथा संभरण काल भी अधिक है । एक धूम्र कक्ष ईंटों का बना होता है, जिसमें एल्यूमिनियम का दरवाजा लगा होता है (ग्लासवूल इनसुलेसन .युक्त) । इसकी उंचाई 7 फिट होती है जिसमें धूम्र उप-कक्ष का आयतन 2 फिट × 2 फिट होता है । धूम्र उप-कक्ष में 7 टांट होते हैं जिसमें लोहे की जालियां स्वतंत्र रूप से रखी जा सकती हैं । कक्ष के नीचले भाग में शयन कक्ष होता है ।

इसका आकार 2 फिट×2 फिट×2.5 फिट होता है । लोहे की जालियां पर मछलियों को बिछाकर शयन कक्ष में आग लगा दी जाती है और दरवाजा बंध कर दिया जाता है । बीच बीच में ऊपर की जाली नीचे और नीचे की जाली उपर बदलते रहते हैं, जिस से मछलियां समान रूप से धूम्र शुष्क हो सकें ।

निष्कर्ष

हीराकुड जलाशय के कुल मत्स्य उत्पादन का 35-40% भाग उप फसल (बाई कैच) को ताज़ा, धूप में सुखा कर या धूम्र शुष्क करके खाया तथा बेचा जाता है । इनमें धूम्र शुष्क पद्धति मुख्य है । परन्तु पारम्परिक विधियों यानि पुआलझाड़ा, हांडीसुखा और चालीसुखा द्वारा प्रस्तुत अन्तिम उत्पाद की गुणवत्ता निम्न से मध्यम दर्जे की रिकार्ड की गयी है और इन उत्पादों का संभरण काल भी यथेष्ट कम हैं । के.म.प्रौ.सं. ने एक आधुनिक धूम्र कक्ष का आविष्कार किया है जो कि निर्माण में सस्ता तथा उसका अन्तिम उत्पाद भी उच्च कोटि का होता है । इसलिए इस धूम्र कक्ष को मछुवारों के बीच लोकप्रिय बनाने के लिए प्रचार एवं प्रसार को महत्व दिया जाना चाहिए जिससे मछुवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाया जा सके ।

